

खस की उन्नत खेती एवं आवश्यक तेल उत्पादन

शिवांक प्रजापति¹ और रूचि राजपूत¹

¹रानी लक्ष्मी बाई केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय, झाँसी, उत्तर प्रदेश, भारत - 284003

*E-mail: shivankprajapati52@gmail.com

खस, जिसे अंग्रेज़ी में वेटिवेर कहा जाता है, एक बहुवर्षीय सुगंधित घास है। इसका वानस्पतिक नाम क्राइसोपोगोन जिज़ानियोइडस है (पूर्व नाम वेटिवेरिया जिज़ानियोइडस)। यह पौधा मुख्यतः अपनी गहरी, सुगंधित जड़ों के कारण महत्वपूर्ण है, जिनसे उच्च गुणवत्ता का आवश्यक तेल प्राप्त किया जाता है। भारत विश्व के प्रमुख खस तेल उत्पादक देशों में से एक है, तथा उत्तर प्रदेश, राजस्थान, तमिलनाडु, कर्नाटक और मध्य प्रदेश में इसकी व्यावसायिक खेती की जाती है। खस की खेती केवल आर्थिक दृष्टि से ही लाभकारी नहीं है, बल्कि यह पर्यावरण संरक्षण, मिट्टी कटाव नियंत्रण, जल संरक्षण तथा ढलानों की स्थिरीकरण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसकी जड़ें 2 से 4 मीटर तक गहराई में जाती हैं, जिससे यह मिट्टी को मजबूती से बांधे रखती है।

जलवायु एवं मिट्टी की आवश्यकता

खस उष्ण एवं उपोष्ण जलवायु का पौधा है। 22°C से 40°C तापमान इसकी वृद्धि के लिए अनुकूल माना जाता है। यह 1000 से 2000 मिमी वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में अच्छी तरह विकसित होता है, परंतु इसकी विशेषता यह है कि यह सूखे एवं अधिक वर्षा दोनों परिस्थितियों को सहन कर सकता है। मिट्टी की दृष्टि से रेतीली दोमट (Sandy loam) भूमि सर्वोत्तम मानी जाती है। अच्छी जल निकासी अत्यंत आवश्यक है क्योंकि जलभराव की स्थिति में जड़ सड़न की समस्या उत्पन्न हो सकती है। इसका उपयुक्त pH 6.5 से

8.5 के बीच होता है। हल्की क्षारीय एवं लवणीय भूमि में भी इसकी सफल खेती की जा सकती है, जिससे यह सीमांत भूमि के उपयोग के लिए उपयुक्त फसल बन जाती है।

भूमि की तैयारी

खेत की तैयारी अच्छी फसल के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। सर्वप्रथम खेत की 2 से 3 गहरी जुताई करनी चाहिए। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा बाद की जुताई कल्टीवेटर या देशी हल से की जाती है। इसके पश्चात खेत को समतल किया जाता है और सभी खरपतवार एवं अवशेषों को हटा दिया जाता है। भूमि तैयारी के समय 10 से 15 टन प्रति हेक्टेयर सड़ी हुई गोबर खाद या कम्पोस्ट मिलाना लाभकारी होता है। ढलानदार क्षेत्रों में कंटूर लाइन पर रोपण करने से मिट्टी कटाव में कमी आती है।

रोपण सामग्री एवं प्रवर्धन

खस की खेती सामान्यतः बीज द्वारा नहीं की जाती क्योंकि अधिकांश व्यावसायिक प्रजातियाँ बीजरहित होती हैं। इसका प्रवर्धन स्लिप या कलम द्वारा किया जाता है। एक वर्ष पुराने स्वस्थ पौधों को उखाड़कर उनकी जड़ों को साफ किया जाता है। 2 से 3 टिलर वाले छोटे पौधों को अलग कर 15-20 सेमी जड़ लंबाई तक काट लिया जाता है। ऊपर का भाग लगभग 20-25 सेमी रखा जाता है। रोपण दूरी 45 × 45 सेमी या 60 × 45 सेमी रखी जाती है। मिट्टी



खस (क्राइसोपोगोन जिज़ानियोइडस) का फसल

संरक्षण हेतु 30 सेमी दूरी भी अपनाई जा सकती है। प्रति हेक्टेयर लगभग 40,000 से 50,000 स्लिप की आवश्यकता होती है।

रोपण का समय

खस की रोपाई के लिए मानसून प्रारंभ (जून-जुलाई) सर्वश्रेष्ठ समय है क्योंकि इस समय पर्याप्त नमी उपलब्ध रहती है। सिंचित क्षेत्रों में फरवरी-मार्च में भी रोपण किया जा सकता है। वर्षा आधारित क्षेत्रों में मानसून पर निर्भर रहना पड़ता है।

पोषक तत्व प्रबंधन

जैविक खाद के रूप में 10-15 टन गोबर खाद प्रति हेक्टेयर उपयोगी है। वर्मी कम्पोस्ट 3-5 टन प्रति हेक्टेयर भी दिया जा सकता है। रासायनिक उर्वरकों में नाइट्रोजन 100-120 किग्रा, फॉस्फोरस 40-60 किग्रा तथा पोटाश 40 किग्रा प्रति हेक्टेयर दिया जाता है। नाइट्रोजन को दो भागों में विभाजित कर आधी मात्रा रोपण के समय तथा शेष 45-60 दिन बाद देना चाहिए। सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे जिंक एवं आयरन की कमी वाली भूमि में पत्तियों पर छिड़काव से वृद्धि में सुधार होता है।

सिंचाई प्रबंधन

रोपाई के बाद प्रारंभिक 30-40 दिनों तक हल्की एवं नियमित सिंचाई आवश्यक होती है। सामान्यतः 10-15 दिन के अंतराल पर सिंचाई पर्याप्त रहती है। एक बार पौधे स्थापित हो जाने पर कम पानी की आवश्यकता होती है। जलभराव से बचाव अत्यंत आवश्यक है। सूखा प्रभावित क्षेत्रों में 20-25 दिन के अंतराल पर सिंचाई करना लाभकारी होता है।

खरपतवार नियंत्रण

रोपाई के 30-45 दिन बाद पहली निराई-गुड़ाई करनी चाहिए। दूसरी निराई 60-75 दिन बाद की जाती है। प्रारंभिक तीन महीने खरपतवार नियंत्रण के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं। जैविक मल्लिचग अपनाते से नमी संरक्षण एवं खरपतवार नियंत्रण में सहायता मिलती है। सामान्यतः रासायनिक खरपतवारनाशी की आवश्यकता नहीं पड़ती।

रोग एवं कीट प्रबंधन

खस अपेक्षाकृत कम रोग एवं कीट प्रभावित फसल है। जलभराव की स्थिति में जड़ सड़न हो सकती है। शुष्क क्षेत्रों में दीमक का प्रकोप देखा जा सकता है। नियंत्रण के लिए उचित जल निकासी, नीम खली का प्रयोग तथा ट्राइकोडर्मा जैसे जैव-एजेंट का उपयोग प्रभावी रहता है।

फसल अवधि एवं वृद्धि

रोपण के लगभग 3-4 माह बाद पौधे पूर्ण रूप से विकसित हो जाते हैं। जड़ें 10-12 माह में परिपक्व होती हैं। तेल उत्पादन के उद्देश्य से 12-18 माह बाद खुदाई करना उपयुक्त रहता है, क्योंकि इस अवधि में जड़ों में तेल की मात्रा अधिक होती है।

कटाई एवं जड़ खुदाई

कटाई के समय ऊपर की घास को लगभग 30-40 सेमी ऊंचाई पर काट दिया जाता है। इसके बाद कुदाल या हल की सहायता से जड़ों को सावधानीपूर्वक निकाला जाता है। जड़ों को साफ पानी से धोकर 2-3 दिन धूप में सुखाया जाता है। सूखी जड़ों को भाप आसवन विधि से संसाधित कर तेल निकाला जाता है।

तेल निष्कर्षण एवं उपज

भाप आसवन विधि से 18-24 घंटे तक प्रक्रिया चलती है। सामान्यतः 1-1.5 प्रतिशत तेल प्राप्त होता है। एक टन जड़ों से लगभग 8-12 किलोग्राम तेल प्राप्त किया जा सकता है। प्रति हेक्टेयर 15-25 टन जड़ उपज तथा 80-120 किलोग्राम तेल उत्पादन संभव है, जो भूमि, प्रबंधन एवं पौध आयु पर निर्भर करता है।

आर्थिक महत्व

खस का तेल अंतरराष्ट्रीय बाजार में उच्च मूल्य पर बिकता है। प्रति हेक्टेयर शुद्ध लाभ 1.5 से 3 लाख रुपये तक प्राप्त हो सकता है, जो क्षेत्र, लागत एवं बाजार मूल्य पर निर्भर करता है। इसके अतिरिक्त सूखी जड़ों से चटाई, पंखे, सजावटी वस्तुएँ तथा सुगंधित उत्पाद बनाए जाते हैं, जिससे अतिरिक्त आय प्राप्त होती है।

पर्यावरणीय एवं संरक्षण महत्व

खस की जड़ें मिट्टी को स्थिर करती हैं और जल कटाव को रोकती हैं। यह नदी किनारे, ढलानों तथा सड़क किनारे संरक्षण हेतु अत्यंत उपयोगी है। यह फसल जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह कम इनपुट में अधिक उत्पादन देती है और प्रतिकूल परिस्थितियों में भी जीवित रहती है।

निष्कर्ष

खस की खेती एक लाभकारी, पर्यावरण-अनुकूल एवं टिकाऊ कृषि विकल्प है। इसकी गहरी जड़ प्रणाली मिट्टी संरक्षण में सहायक है, जबकि जड़ों से प्राप्त तेल उच्च आर्थिक मूल्य रखता है। संतुलित उर्वरक प्रबंधन, उचित दूरी, जल निकासी तथा समय पर कटाई अपनाकर किसान इससे दीर्घकालिक स्थिर आय अर्जित कर सकते हैं। सीमांत एवं अनुपजाऊ भूमि के उपयोग में भी यह फसल अत्यंत उपयुक्त सिद्ध होती है।

